भीड़ साक्षी है

भीड़ साक्षी है

रमेश पोखरियाल 'निशंक'

विनसर पब्लिशिंग कम्पनी
देहरादून

भीड़ साक्षी है

: रमेश पोखरियाल 'निशंक'

संस्करण	:	प्रथम, 2007
ISBN	:	81-86844-01-9
मूल्य	:	Rs. 150/-
प्रकाशक	:	**विनसर पब्लिशिंग कम्पनी** प्रथम तल, नैथानी काम्प्लेक्स 120, डिस्पेन्सरी रोड, देहरादून-248001
शब्द संयोजन	:	विनसर कम्प्यूटर्स 56/6 कैनाल रोड, जाखन देहरादून दूरभाष : 3094463
वितरक	:	मलिका बुक्स 348 मेन रोड, संत नगर (बुराड़ी) दिल्ली-110084 दूरभाष : 27612927
मुद्रक	:	एलाइड प्रिन्टर्स देहरादून

K-------------------- Price : Rs. 150/

अनुक्रम

रोशनी की एक किरण / 5

किसे दोष दें / 8

मनीला / 12

अन्तिम क्षण तक / 16

भीड़ साक्षी है / 19

अप्रत्याशित / 25

दिहाड़ी पर / 29

ऐसा क्या कारण / 32

ड्राइवर / 36

अपना दर्द / 39

....

रोशनी की एक किरण

वह चुपचाप गुमसुम मुझे निहार रहा था, उसकी खामोशी ने मुझे तरह-तरह के प्रश्नों के घेरे में घेर लिया था। मैं बार-बार उसे झकझोरता, कुछ तो बताओ क्या हो गया तुम्हें ? हर बार थोड़ा सा गले में खरास सी निकाल कर वह पुन: पहली जैसी मुद्रा में आ जाता।

उसकी रहस्यमयी आंखें मुझे ऐसी लग रही थी, मानो मुझसे तरह-तरह के प्रश्नों का उत्तर मांगना चाहती हैं, ...क्या यह मेरा गुनाह था कि मैं निष्पक्ष रहा ? क्या यह मेरा कसूर है कि मैं इमानदार हूं ? ....जुटकर के कार्य करता हूं, मैं स्पष्ट बात करता हूं, निष्ठा से कार्य करना क्या मेरे लिये अभिशाप है ? ये ऑफिस वाले उल्टा मुझे चोर की निगाह से देखते है। यही तो मेरी घुटन का मुख्य विषय है। कहते हैं कब तक ऐसे बने रहोगे हम भी देखेंगे तुम्हें। चुनौती पर चुनौती देते हैं मुझे....। कब से जूझ रहा हूं मैं अकेला ! बस अकेला....!! नाम लेने के लिये भी कोई साथ नहीं देता, पागल हो जाऊंगा मैं, ये मेरा ईमान डिगाना चाहते हैं। वो बड़ा अधिकारी कितना ईमानदार बनता है बाहर से, पर सबसे बड़ा भ्रष्ट है। बस उसको पैसे के सिवाय कुछ भी दिखाई नहीं देता। अपना ईमान धर्म तो इनका कुछ है नहीं, दूसरों का भी नहीं रहने देंगे....। तभी तो मैं बार-बार तुमसे अपना रोना रोता था कि नहीं करनी है मुझे ऐसी नौकरी, जिससे मुझे अपना ईमान धर्म बेचना पड़े।

मैं यही तो तुम्हें बार–बार कहा करता था, तुम मुझे स्वीकृति दो तो मैं इस नौकरी को छोड़ कुछ दिन स्वाभिमान की जिन्दगी जीते हुये कुछ काम करना चाहता हूं।

मैं तुम्हारी इस बात से सहमत था और आज भी महसूस करता हूं कि कब तक मैं दूसरे के पाँवों पर खड़ा रहूंगा यह भी तो मेरा नपुंसकत्व था, किन्तु आज मुझमें कौन सा पुरुषत्व है जो सारे गलत–सलत कार्यों को होता अपने आगे देख रहा हूं ? पर इस नौकरी के मोह ने तो मुझे धृतराष्ट्र बना दिया है। इसी से न जाने मैं क्यों मौन दृष्टा हो रहा हूं ? पता नहीं क्यों मर गई मेरी आत्मा ? कहां खो गई मेरी स्वाभिमानी प्रवृति ? लोग कहते थे तुम स्वाभिमानी हो, बहुत पैनी दृष्टि है तुम्हारी, तुम दूर दृष्टि से सोचते–विचारते और काम करते हो, ...तुम में बहुत आत्म विश्वास है....।

पर तुम्हारे सिर्फ इस पेट के मोह ने उस आत्मबल को भी क्षीण कर दिया है....।

अभी भी बचा लो मुझे, मैं जीना चाहता हूं, अन्याय के प्रति लड़ने दो मुझे। तुम केवल बात करते रहोगे....आखिर हमने क्यों छूट दी है इन्हें अपने ही समाज को रोज लूटने की। यह तो खुले आम डकैती है....! साठ प्रतिशत पैसा खा गये उस योजना में....। मुझसे बोलते हैं तुम भी हस्ताक्षर करो, मुझे भी सहभागी बनाना चाहते हैं। उस पाप में। कितना–कितना पैसा नहीं खाया इन्होंने। हर कागज में घोटाले ही घोटाले हैं, सिर्फ कागजों में ही योजनायें पूरी की हैं इन्होंने, आंकड़ों के तो ये माहिर हैं, इतना ही नहीं तो एक और धोखा किया है। पूरे जनपद के अन्दर प्रथम दिखाया है इन्होंने, अपने को।....और मैं भी तो कम दोषी नहीं, मैंने भी तो वो झूठा पुरस्कार लिया है इन हाथों से....भगवान ने इसलिये थोड़े ही दिये थे ये हाथ कि आत्मा को मारकर जो चाहे इन हाथों से लिख लूँ। गलत को सही, सही को गलत दर्शा दूँ। कुछ काम करने के लिए, कुछ पुरुषार्थ करने के लिये मिले थे ये दो हाथ, पर इन पर भी कुछ भरोसा नहीं रह गया मुझे....।'

उसे लगा जैसे उसका अंग–प्रत्यंग सब कुछ उसका नहीं, उसकी आत्मा भी कहीं खो गई है, वह मिट्टी की मूर्ति की तरह है जिसका

कोई अस्तित्व नहीं, वह चाहे जिसके हाथों का खिलौना बने जब चाहे उसे कोई तोड़ सकता है....और वह टूट-टूटकर बिखर सकता है....।

उसकी श्वासें तेज होने लगी, मुझे लगा न जाने इसे क्या हो गया, उसकी आंखें पथराई सी हो गई थी, मैं घबरा उठा, कई बार आवाज देने के बाद भी वह किसी हरकत में नहीं आया तो मुझे चिन्ता हुई। मैंने उसे तेजी से झकझोरा, अरे....! हो क्या गया बताओ तो सही, क्या महसूस कर रहे हो ? डॉक्टर को बुलाऊं....?

बहुत देर बाद उसके चेहरे पर थोड़ी हंसी सी आई। मेरी भी श्वांस में श्वांस आई।....वह धीरे से बोला।

कहीं खो गया था....भटक सा गया था मैं, अब वापस लौट आया हूं। फिर टेबुल की ओर गया और एक सादे लम्बे कागज में कुछ लिखने लगा।....मैं चुपचाप बैठा उसे देखता रहा। आशु....! 'क्या लिखने लगे....?

बोला 'अपनी किस्मत को लिखने जा रहा हूं....लिख सका तो....।'

थोड़ी देर बार मैंने उसके हाथ एक थमाया देखते ही मैं कुछ परेशान ही चौंका 'तुम्हारा दिमाग तो ठीक है न ? नौकरी से इस्तीफा देंगे ?'

'....इसे देने में बहुत विलम्ब हो चुका है, पर इसका भी प्रायश्चित अब सामाजिक चेतना जागृत कर समाज में व्याप्त इन तमाम बुराइयों का डटकर मुकाबला करने से करूंगा....।

मैंने फैसला कर लिया है कि अब मैं....मौन नहीं रहूंगा....न जाने इस समाज में कितनी आत्माएं उन्हें कचौट रही होंगी मैं इन तमाम को एकत्रित कर इस देश के स्वाभिमान को बचाने की कोशिश तो कर ही सकता हूं।

'इस कालिमा में मैं रोशनी की एक किरण ही सही पर कभी तो इसका अन्त होगा।'

किसे दोष दें !

बस खचाखच भरी थी, कन्डक्टर एक की गोद में एक बिठाकर भी चैन नहीं पा रहा था, लोगों को बोरियों की तरह वह ठूंसता ही जा रहा था। बस में पांव रखने की भी जगह तक न थी, उस पर भी ड्राइवर बस नहीं चला रहा था, सो बस में बैठा एक युवक गुस्से से तिलमिला कर बोल पड़ा '....क्यों भाई क्या मर्जी है ? हमारा सिर अभी खाली है उस पर भी और बिठा लो न !'

कन्डक्टर ने भी गुस्से में उत्तर दिया, 'केवल आपको ही तो नहीं जाना है....और भी तो लोग हैं जिन्हें आपकी ही तरह जल्दी पहुंचना होगा, आपको पता नहीं है कि इसके बाद उधर के लिये और कोई बस नहीं, सारी ही बसें तो चुनाव में लगी हैं....।

एक आदमी बीच में ही बोल पड़ा '....अभी तो दस दिन बाकी हैं चुनाव में....अभी से क्या आफत आ गई ?

'चुनाव में चाहे एक साल हो....बसें तो अभी से खड़ी कर दी हैं सरकार ने' चिड़चिड़ाते हुये कन्डक्टर बोला।

बात चुनाव पर आ टिकी, पीछे से एक व्यक्ति बोला – 'अरे भई इन नेताओं का काम हमेशा जनता को परेशान करना रहा है। क्या कभी इन्होंने हमारी परेशानियों को समझा है ? खुद मोटरकारों में बड़े ठाठ–बाठ से घूमते हैं। पांच वर्षों में यही तो एक समय होता है जब इन नेताओं के दर्शन सुलभ होते हैं....और फिर ऐसे गायब हो जाते हैं....जैसे गधे के सिर से सींग....। ढूंढने पर भी नजर नहीं आते हैं....अरे भई नेता

तो पहले के होते थे जो जनता के बीच रहकर उनके दु:ख दर्दों को समझते थे....।'

अब बस चल पड़ी थी....साथ ही चुनावी चर्चा ने भी जो पकड़ लिया था। एक व्यक्ति कह रहा था....अजी गलती तो हमारी ही है न, जब ये बड़े पेट वाले वोट मांगने आते हैं और गिड़गिड़ा कर हाथ जोड़कर खुद को जनता का सेवक बताते हैं....तभी हमें इनसे पूछ लेना चाहिए कि फिर कब शक्ल दिखाओगे जन-जन के मसीहा....? हमें इनकी पहचान तभी कर लेनी चाहिए। अपने मुखियाओं के कहने पर हम इन्हें वोट देते हैं। वे क्यों नहीं दिलवायेंगे इन्हें वोट, आखिर बीच में खाने को जो मिलता है....दूसरा बोला - 'पर ये समझ नहीं आता कि पानी की तरह बहाने के लिये इनके पास पैसा आता कहां से है....?

'....अरे भई हम गरीबों का खून चूसते हैं ये लोग जनता की भलाई के लिये नहीं बल्कि अपने बड़े पेट और घर भरने के लिये ही ये चुनाव लड़ते हैं और हमारा पैसा बड़ी शान से बहाते हैं। इन्हें तो चुनाव के समय गांवों में घुसने ही नहीं देना चाहिये। इन लोगों का तो कोई ईमान धर्म है ही नहीं....। गिरगिट की तरह ये खूब रंग बदलते हैं....। हमारे बीच कुछ बातें करते हैं तो ऊपर जाकर कुछ और हो जाते हैं हम गांव वालों को आपस में लड़ा भिड़ाकर ये एक हो जाते हैं....।'

सबको कुछ न कुछ बोलने का मौका मिल गया था, एक व्यक्ति से भी रहा न होगा तो बोला....।

'....अरे ! वो चुनाव देखा आपने ? जिस समय इन बड़े नेताओं ने जात-पांत का जहर फैलाया था गढ़वाल में। भाई को भाई का दुश्मन बना दिया था....'ख' 'ब' को राजनीति चलाकर हमेशा से एक साथ रहने वाले हम लोगों को अलग-अलग कर दिया था। जात-पांत और मजहबी मतभेदों को लेकर हाथापाई और हिंसा तक भड़क उठी थी। एक गांव जैसे दो देश बन गये थे। ये हिन्दुस्तानी होकर भी अंग्रेजों की 'फूट डालो राज करो' को नीति को अमल मे ंलाते हैं, कोई इनसे पूछे कि विकास करने के बजाय ये हम लोगों के बीच क्यों कटुता पैदा करते हैं ? गांव गांव, मुहल्लों-मुहल्लों में घुसकर क्यों जहर फैलाते हैं ये लोग ? कितनी बुरी बात है कि हम गांव में दो चार लोग भी एक-दूसरे से मुंह मोड़कर

रहते हैं ओह....' अफसोस के कारण वह व्यक्ति आगे कुछ न कह पाया तो दूसरे ने बात आगे बढाई....।

'....अरे इन नेताओं की तो मति मारी गई है, पढ़े-लिखे होकर भी जाति-पांति की बातें करते हैं, अब तो हरिजन भाइयों के मन में भी इन्होंने जहर भर दिया है....।'

बस में बैठा एक युवक तभी बोल पड़ा - 'अरे भई ! हमारी बला से कोई जीते हारे, यहां तो कोई परिवर्तन होने से रहा....आज तक कितने नेता हुये पर इन चालीस वर्षो में गढ़वाल ने क्या पाया ? कितना सुधार हुआ इसका ? प्रत्येक नेता ने पहले सुधार किया तो अपना, नेता बनकर इन्होंने अपने पेट भरे, गढ़वाल के बाहर अपनी कोठियां खड़ी की इन्होंने, आज कितने नेता गढ़वाल के हुये ? गढ़वाल में रहे ? यहां मरने के लिए तो हम ही हैं न ? हमारे सुख-दुःख की किसको पड़ी है ? बस 'सीजन' पर अवश्य सैर-सपाटे के लिए आ जाते हैं....अपनी चम-चमाती कारों में....।'

एक वृद्ध जो बगल में बैठे थे बोले....'बेटा मेरा लड़का तो फौज में है, जब कोई शादी-ब्याह का मौका आता है तब भी वह नहीं आता, रोज कहता है जरूरी ड्यूटी में हूं हमारे बच्चे देश की सीमाओं पर लड़ते रहते हैं हम मां-बापों की दशा तो ये है कि एक-एक पल चिन्ता में रहते हैं।

और लड़ाई के समय तो आंखें बस उधर ही लगी रहती हैं। एक क्षण चैन नहीं मिलता, खाना-पिना सब हराम हो जाता है। सरकार ने क्या विकास करना है हमारा....? वह तो सिर्फ देखती है, जितना बोलती है उतना करती नहीं है....। हमने तो अपने दिल के टुकड़ों को दे रखा है सरकार को, हमारे ये लड़के अपनी जान से भी बढ़कर परिवार के सुख-दुख को छोड़कर अपनी ड्यूटी बड़ी समझते हैं। अच्छा भी है, अपनी जान हथेली पर रखकर मेरे दिल के टुकड़े देश के लिए ही तो लड़ते हैं, हमें कब क्या खबर सुनने को मिले, दिल पकड़कर रखते हैं। चिट्ठी समय पर नहीं, आयी तो....हमको मालूम है क्या हाल हो जाते हैं हमारे।

दूसरा व्यक्ति बगल में बैठा भावुक हो गया था, दूध तो तुमने ही

पिलाया है अपने बच्चों को....पर एक ये हैं नेता जो केवल भाषणों से जनता का पेट भरते हैं इन्हें जनता की भूख का क्या पता होना है, गरीबी कभी देखी हो तब न....।

'एक और व्यक्ति बोला....' देखा नहीं आपने बड़े-बड़े नेताओं ने भी दलाली खाई है, अभी रेडियो से आया था कि देश के बड़े-बड़े नेता भी कमीशन घोटाले में हैं।

बस मोड़ों पर तेजी से घूमती झटका मारती बढ़ती जा रही थी, जैसे उसे इन सब बातों से कोई लेना-देना न हो। बस जगह-जगह रूकती जा रही थी, जिनती देर बस रूकती लोगों की चर्चा भी थाह लेती, सवारियां उतरती और बस के चलते ही फिर शुरू हो जाती थी चर्चा....। जितनी सवारियां उतरती उससे कई गुना अधिक सवारियां बस में चढ़ती जब खड़े होने का भी स्थान नहीं रहा तो, लोग बस की छत में चढ़ जाते, ड्राइवर मना करता पर लोग ड्राइवर कन्डक्टर की एक न मानते। एक जगह तो बस चढ़ाई में नहीं चढ़ पाई, गियर नहीं लगा तो बस पीछे की ओर जाने लगी, लोग चिल्लाने लगे....सबके होश हवास उड़ गये थे। आज तो बस गये....पर ड्राइवर ने बचा लिया था सबको। फिर तो बस खड़ी कर उसने बस चलाने से इन्कार कर दिया, आधी भीड़ छत से उतार कर फिर उसने सबके आग्रह के पश्चात बस चलाई। कुछ देर तो लोग चर्चा-उर्जा सब भूल गये, पर अब चर्चा आ गई राजनीति से जनता पर।

'क्या करे कोई यदि अभी दुर्घटना हो जाती तो किसे दोष देते हैं हम, नेताओं को ? अरे हम ही तो सारी व्यवस्थाओं को बिगाड़ते हैं। अब देखों ड्राइवर-कन्डक्टर कितना मना करते रहे पर लोग उन्हें मारने पर तक उतारू हो गये, बोला किसी ने बस के अन्दर से कि ड्राइवर ठीक बोल रहा है ? बातें तो बड़ी-बड़ी कर देते हैं हम लोग, पर अपने को नहीं देखते....।'

यकायक चर्चा बन्द हो गई, मानो सबके मुंह पर ताले पड़ गये हों।

□ □

मनीला

सारे अस्पताल के वातावरण को उसने बिल्कुल बदलकर रख दिया था, उसकी चौबीसों घण्टों की वह मुस्कराहट दु:खी से दु:खी व्यक्ति को भी एक बार मुस्कराने के लिए बाध्य कर देती थी।

मैं जब गम्भीर मुद्रा में बैठा कहीं खोया हुआ था, उसने मेरा कन्धा थप थपाया 'कैसे खोये हैं, सब ठीक तो है न।'

'बस यों ही....' जब तक मैं अपना वाक्य पूरा भी नहीं कर सकता था कि।

'अरे सब ठीक होगा क्या चिन्ता करते हैं, क्या होना है चिन्ता से। खुश रहो, भगवान से प्रार्थना करो कि जो भी हो सब ठीक हो, काहे को बिना बात चिन्ता में डूबे हो....।'

दूसरी मंजिल से 'मनीला !' की आवाज आई। आवाज सुनते ही 'अरे बाबा डॉक्टर साहब बुलाई हैं' कह कर वह चल दी, जो भी अस्पताल में आता मनीला को पूछने लगा।

मैंने इस मैमोरियल के एक कर्मचारी को पूछा – 'ये मनीला है कौन ? डॉक्टर की बहिन है क्या ? बोला 'नहीं तो'

'फिर कौन है ?'

'यहां की नर्स है।'

'पर नर्स तो और भी होंगी ?'

'क्यों नहीं, सात हैं उनमें एक ये मनीला भी है।'

'इन सब में सीनियर है क्या ?'

'नहीं, ये तो अभी चार साल से है।'

'फिर अस्पताल में जो भी आता है मनीला को ही क्यों पूछता है ?'

बोला 'मनीला का व्यवहार ही कुछ ऐसा है।'

'पर अस्पताल में और लोग भी तो व्यवहार अच्छा रखते होंगे ? ये तो प्राइवेट अस्पताल है, अच्छा व्यवहार नहीं होगा तो लोग आने बन्द हो जायेंगे ?'

कुछ आश्चर्य करता चिढ़ता हुआ सा बोला –

'जाने क्या जादू कर दिया इस मनीला ने, जबसे आयी है, डॉक्टर ने औरों को पूछना ही बन्द कर दिया है बाहर का मरीज जो भी आये बस डॉक्टर तो जैसे उसके लिए कुछ रह ही नहीं गई, कई बार ये बात हमने डाक्टर साहब जी को भी समझा दी है पर....' थोड़ा झल्लाता हुआ बोला –

'वैसे तो सारा स्टाफ भी बहुत अच्छा मानता है उसे, सबका काम करती है। हमारी थोड़ा तबियत खराब हुई नहीं कि जबरन आराम के लिये कहती है। बोलती है मैं सब अपने आप करूंगी पहले स्वास्थ्य....।

मनीला के नीचे उतरते ही वह कर्मचारी यहां से काम का बहाना बनाता चल दिया पर मनीला ने उसे तुरन्त रोका।

'ऐ सुरेन्द्र सुन....!' और सुरेन्द्र को पकड़ कर वह दूसरे कमरे में चल दी थी थोड़ी देर बाद सुरेन्द्र कहीं बाहर किसी कार्य से चला गया। इस बीच कर्मचारी हो चाहे मरीज अथवा मरीज के साथ आया कोई व्यक्ति ! मनीला मस्ती में जब भी उसे मौका मिलता उन्हें छेड़ देती थी, उसकी चंचल आंखे और ओठों की उस मन्द मुस्कान को देखते ही सब प्रसन्न हो उठते।

भीड़ बढ़ती जा रही थी। 15-20 महिला पुरुष हो गये थे, अभी तक भी डॉक्टर ऊपरी मंजिल अपने निवास से नीचे नहीं उतरी थी।

मैंने देखा कि जितने भी लोग वहां पर हैं सब मनीला की ही चर्चा कर रहे हैं, किसी न किसी बात को लेकर लोग उसकी कार्य प्रणाली,

सक्रियता, सहजता, मिलनसार, मृदुस्वभाव और जानकारी की चर्चा करते नहीं थक रहे थे, कोई कह ही रहा था कि वह बहुत मस्त है अभी थोड़ी देर में देखोगे तो गाना गाते भी नजर आयेगी....।

तभी वह दूसरी ओर से गीत गुन-गुनाती चली आयी। फिर 'हाय मरी !' कहकर उसने सिर पर हाथ रखा और वापस चली गई, उसके हाव-भव से लगा जैसे वह सिकी काम को भूल गई है।

एक मरीज बिल्कुल मरणासन्न स्थिति में पहुंचा तो सभी कर्मी इकट्ठा हो गये, एक दूसरा आपस में बोला, 'क्या देख रहे हो मनीला सिस्टर को कहो न' उनमें में से एक सिस्टर भाग-भाग कर दूर वाले कमरे में पहुंची और मनीला को लेकर आयी, मनीला ने तुरन्त आकस्मिक कक्ष में मरीज को पहुंचाया। फटाफट न जाने क्या-क्या किया तुरन्त डाक्टर को फोन किया। आप नीचे आ जाइये बस उसका फोन करना था कि डाक्टर चली आई, आकस्मिक कक्ष में डाक्टर और बस मनीला, बाकी को सब बाहर कर दिया गया था, मरीज के साथ आये घर के एक व्यक्ति को अन्दर बुला दिया था।

लगभग 15 मिनट हो गये कोई बाहर न निकला तो मरीज के साथ के लोगों में और भी छटपटाहट हुई। लेकिन देखते-देखते मनीला बाहर निकली तो लोगों ने उसे घेर लिया, कैसा है मरीज ? फिर वही रटी-रटाई सी भाषा, बोली।

'काहे को चिन्ता करते हो, बाबा ठीक हो जायेंगे। बैठो चिन्ता की बात नहीं। सबके कन्धे थपथपाती हुई वह किसी दवाई को लेकर फिर अन्दर चली गई।

एक बुजुर्ग से जो बहुत देर से यह सब देख रहे थे, बोले।

'भगवान सबको ऐसे ही बच्चे दें, यदि संसार में ऐसे लोग हो जांय तो किसी को दु:ख नहीं पहुंचेगा, मुझे तो इसी लड़की ने बचाया है, कितनी सेवा की इसने ओह !, कौन था मेरा जो मेरी चिन्ता भी करता, परमात्मा ने हमें इन जैसे गरीबों की देख-रेख के लिये यहां भेजा है।

न जाने कितने रूपये की तो दवाई लग गई होंगी, सब अपने आप करती चली गई, मुझे बोलती है 'बाबा बस तुम्हें जब भी तकलीफ हो तुरन्त आ जाया करो।' रोज-रोज आने में भी तो शर्म आती है, पर करूं

भी तो क्या, शर्म करूंगा तो घर के अन्दर मर जाऊंगा।

किसी ने पूछा 'कोई नहीं है आपका।'

'नहीं कोई नहीं, लगता था भगवान भी नहीं है पर अब लगने लगा कि भगवान है, नहीं तो पिछली बार मैं पर ही गया होता मैं तो मनीला बेटी को ही अपना भगवान समझता हूं ! बोलती है भगवान पर भरोसा रखो सब ठीक हो जायेगा, कितनी हंसती रहती है किसी को क्या पता होना है दूसरे के दुःख का' कहकर बाबा की आंखों में आंसू टपक आये....!'

मनीला के दुःख की सभी बात सुनकर अचम्भित हुए कितनी मस्त रहती है मनीला, स्वयं तो खुश रहती है किसी दुःखी आदमी को भी हंसी-खिला कर खुश कर देती है। एक व्यक्ति ने बाबा का हाथ पकड़ कर पूछा - 'क्या हुआ सिस्टर के साथ....।'

'सारा परिवार मकान में दबकर मर गया भाई-बहिन मां-बाप सब, मनीला भी साथ ही थी पर भगवान ने इसे बचा दिया।

बस तबसे कहती है भगवान ने मुझे काम के लिए यहां छोड़ा है दुःख करके क्या करूंगी जीवन भर घुटती रहूंगी, इससे कुछ लाभ तो होने वाला नहीं, जब तक जिन्दी हूं किसी के काम आ जाऊं बस यही सोचती हूं कभी-कभी तो काम में इतना व्यस्त रहती है कि खाना-पीना तक भूल जाती है, शादी के नाम पर तो बहुत चिढ़ती है, बोलती है 'क्या हमारे देश में बच्चों की कमी है ? अरे जितने बच्चे हैं उन्हीं को हम ठीक करें लिखायें-पढ़ायें, स्वस्थ व निरोग बनाये तो देश कहां से कहां पहुंच जायेगा। यहां जबसे आई हैं इस अस्पताल की काया पलट हो गई है चौबीसों घण्टे मेहनत करती है सबकी चिन्ता करती है, पर उसे अपनी चिन्ता नहीं....!'

लोगों में परस्पर पुनः चर्चा शुरू हो गई थी 'कौन कहेगा कि बेचारी के साथ इतनी बड़ी घटना घटी है, फिर भी खुश....! ईश्वर ने कितना बड़ा दिल दिया है इसे....।'

□ □

अन्तिम क्षण तक

चन्दू की खून-पसीने से सींची छोटी-छौटी नर्सरियां झुलस रही थी, आग की लपटें तेज और तेज होती जा रही थी, लोगों में हाहाकार बच गया। चन्दू की चीखें और तेज होने लगी। वह कभी इधर भागता, कभी उधर....। लोगों को इकट्ठा कर जंगल में लगी इस आग को बुझाने के लिए हाथ जोड़ता, आग्रह करता, गिड-गिड़ाता पर जब लोग ऐसे समय में तर्क-कुतर्क करने लगते कि '....आग तो हर साल लगती है, हम रोज ही आग बुझाने के लिये जाने लगे तो हो गया हमारा काम। जब तक वहां आग बुझाने जायेंगे, तब तक कई काम कर लेंगे।....और फिर वैसे भी तो सरकार ने इन जंगलों को कटाया ही है। हमको क्या दिया सरकार ने, अब तो इन जंगलों में घुसने पर भी हमारे लिए रोक लगा दी है, अपने ही जंगलों में भी हम खुले आम नहीं घूम सकते, क्या करना है हमको इन जंगलों को बचाकर।'

चन्दू चिल्लाता - 'इस वक्त बहस का समय नहीं है भाइयों ! सारा जंगल आग में धधक रहा है, पहले इसे बचा तो लीजिये, तब जितना चाहो बहस कर लेना, कौन रोकता है तुम्हें।'

....पर चन्दू की कोई एक न माना। चन्दू ने फिर माँ बहिनों को पुकारा '....किस ढंग से हमने और आपने इन पौधों को रोपा था, अपने बच्चों की तरह पाला था इन्हें, कुछ तो तरस खाओ इन पर....कुछ तो

तरस खाओ इन पर। रह–रहकर वह जोर–जोर से छाती पीटने लगा।

हे भगवान ! क्या कर दिया तूने यह....? मेरी जिन्दगी की कमाई को....।' चन्दू ने इस जंगल में अकेले–अकेले न जाने कितने पौधों का रोपण किया था। उसने अपने जीवन में इसी को अपना लक्ष्य बनाया था, घर–परिवार सब कुछ उसने इस जंगल को पोषने, संजोने और संवारने में त्याग दिया था। सुबह–शाम ही नहीं बल्कि रात–दिन यह जंगल ही उसका घर हो गया। अपनी औलाद से जितना लगाव होता है आदमी को, उससे भी अधिक लगाव उसे इन पेड़–पौधों से हो गया थां सारा जीवन ही उसने इसमें बिता दिया था। आज उसकी आशा की किरणों पर आग लगी हुई थी। आग की धधकार में छोटे–बड़े पौधे स्वाहा होते जा रहे थे।

लोग जगह–जगह खड़े बातें करते हुए तमाशा देख रहे थे।....ये आग वैसे ही थोड़ी लगी, जरुर विभाग की बेईमानी है। जंगलों में तो स्वयं वन विभाग ही आग लगाता है। ताकि आग लगी दिखाकर कागजों में उनके उल्टे–सीधे काम बरकरार रह सकें और फिर दूसरे साल भी वहीं उनको पेड़ लगाने का बहाना मिल सके।

कोई बोलता – '.... अरे ! ये जंगल तो लगभग चन्दू ने ही बनाया है, उससे वन विभाग को तो कोई खास मतलब नहीं है, पर हो सकता है 'जैलसी' की भावना से विभाग ने आग लगा दी हो....।

'सुना नहीं तुमने कि वन विभाग लाखों रूपये खर्च करके भी ऐसा जंगल नहीं बना पाया, जैसा बनाकर इस चन्दू ने दिखा दिया।'

तमाम बाते होती रही, चन्दू के जीवन भर की कमाई धधकती आग में धूल धूसरित होती रही।

जब चन्दू के लाख आग्रह पर भी किसी ने उसका साथ न दिया तो चीखता–चिल्लाता अकेला ही वह जंगल की ओर भागने लगा।

मिट्टी खोद–खोद कर डालता, एक ओर मिट्टी डालकर थोड़ा बहुत आग बुझाता, दूसरी ओर आग की लपटें और तेज हो जाती, दौड़ते–भागते हांफते–हांफते, अब वह बहुत थक चुका था। जितने हिस्से में वह आग बुझाता उससे भी अधिक हिस्से में आग की लपटें और तेजी से फैलती गई....।

अन्तिम क्षण तक आग बुझाता, मुंह से भगवान को पुकारता-पुकारता चन्दू बेहोश होकर धरती पर गिर पड़ा था, और उसकी वह चीख पुकार यकायक बन्द हो गई थी। बार-बार वह कहता '....अरे गांव वालों ! अभी भी इन जंगलों पर रहम करो। अरे....! ये तुम्हारी सन्तान के समान हैं। आग तेजी से चन्दू की ओर बढ़ती जा रही थी। इधर गांव की महिलायें बार-बार चन्दू की इस बात की चर्चा करती 'ये औलाद ! सन्तानें हैं तुम्हारी....!' अकेला ही चला गया पगला।

दूसरी महिला बोली - 'अकेला न जाता तो क्या करता, कोई भी तो जाने को तेयार नहीं था उसके साथ। यहां तो उसको अपने-अपने कामों की रहती है।

एक महिला भागती हुई आई 'दीदी....! अभी तक चदू दादा चिल्ला रहा था, पर यकायक उसकी कहीं आवाज नहीं आ रही है....।'

'क्या हुआ, क्या हुआ' कहते-कहते चर्चा सारे गांव पर में फैल गई। यकायक कुछ महिलायें जंगल की ओर दौड़ पड़ी। जैसा भी था चन्दू हम सबकी भलाई का काम करता था....।

इधर महिलायें चन्दू के निकट तक पहुंचती है, आग की लपटें भी उसके उतने ही निकट थी, जितनी चन्दू के निकट गांव की महिलायें थी और देखते ही देखते उसका बेहोश शरीर झुलसने लगा। महिलायें प्रयास करती रही पर इन भीषण लपटों में किसी का साहस न हुआ। महिलाओं की आंखों में आंसुओं की धार बहने लगी, चन्दू....चन्दू चिल्लाती रही, पर चन्दू था जो बेहोश आग की गोद में पड़ा था।

अचानक तेज बारिस आई, महिलाओं की अथक मेहनत और बारिस ने चन्दू को बचाने में....।

तेज बारिस ने जंगल की आग तो बुझ गई पर आग से पूरी तरह झुलसे अन्तिम श्वांस गिनते चन्दू को महिलाओं ने उठाया और ईश्वर से विनती करती हुई कहने लगी कि - 'हे प्रभु....! जिस तरह तुमने वर्षा कर चन्दू के जंगल को बचाया है, उसी तरह चन्दू के जीव को भी बचा देना।'

□ □

भीड़ साक्षी है

....अचानक अस्पताल में हो-हंगामा मच गया 'क्या हुआ, क्या हुआ'....लोग कहते हुये 'इमरजेन्सी वार्ड' की ओर भागने लगे। तीन बच्चे एक महिला एक पुरूष बुरी तरह छटपटा रहे थे....नीचे जमीन में पड़े वे इतने छटपटा रहे थे कि ऐसा लगता था अब प्राण छोड़े, तब प्राण छोड़ें।

डाक्टर को इधर-उधर ढूंढा, किन्तु कहीं नहीं मिला। लोगों का आक्रोश बढ़ता जा रहा था। कुछ युवा तो गाली-गलीज पर उतर आये थे, उत्तेजित युवा मरने-मारने की बात करने लगे। उधर बच्चों की हालत और बिगड़ती गई, उनका पुरी तरह छटपटाना देखा नहीं जा रहा था।

एक युवा बोला - वैसे तो एकाध डाक्टर यहां पर ठीक हैं, पर बाकी तो....। एक ने डाक्टर तिवारी का नाम लिया, वह तो पास ही रहते हैं। तुरन्त आ भी जायेंगे चाहे ड्यूटी हो या न हो। दूसरा बोला - 'स्साले ! सब एक जैसे हैं सब चोर हैं, कहां बात कर रहे हो....।' एक युवक उसका हाथ पकड़ कर बोला, ...कैसे कह दिया कि सारे एक जैसे होते हैं ? अरे....। सबको एक ही तराजू में नहीं तोलना चाहिये....।

तरह-तरह की परस्पर चर्चायें होती गई, बीमार तड़फते बच्चों की ओर किसी का ध्यान ही न था, सब आपस में ही एक दूसरे की छींटाकशी में ही लग गये थे।

एक आदमी बोला – '....सारा तन्त्र भ्रष्ट हो गया, जिसको देखो वही गैर जिम्मेदारी, वही गैर जिम्मेदार। किससे कहें ? जायें तो जायें कहां ! किसी से किसी के बारे में बोलना स्वयं बुरा बनना है बस, अधि कारी भी कहां सुनते हैं ? पहले के अधिकारी होते तो....। कहां चला गया वो जमाना....।'

एक बुजुर्ग जो बहुत देर से यह सब देख रहे थे, अपने को रोक न सके और जोर-जोर से चिल्लाकर बोलें....।

'....यही समय है बहस का, यहां तो बच्चे मर रहे हैं और एक तुम लोग हो जो इस मौके पर भी बहस से सिवा कुछ नहीं कर रहे हो। लाओ....जो भी डाक्टर मिलता है, पकड़कर लाओ !'

इतने में अपने में ही खोये मुस्कराते घूमते....टहलते डॉ॰ तिवारी आ पहुंचे, लोग यकायक उन पर टूट पड़े। जितना कुछ भी लोग कह सकते थे उल्टा-सीधा, गाली-गलौज, सभी कुछ कह डाला, डॉ॰ तिवारी के बारे में जो लोग जाते थे उन्हें बुरा लग रहा था। डॉ॰ तिवारी ही तो सारे अस्पताल में एक ऐसे डाक्टर हैं, दीन-दु:खियों की बात सुनते हैं। आदमी की सहायता करते हैं। जो भी जाये उसकी सुनते हैं। पिछले दिनों तो डाक्टारों से तक उनका झगड़ा हो गया था। हमेशा उन्होंने जानता की भलाई की बात की है, अरे....! मारना है तो उनको मारो, उनको गाली-गलौज दो जिन्होंने खुले आम लूट मचा रखी है। मरीज श्वासें गिनता रहता है और ये कहते है....पहले पैसा रखो, फिर मरीज को देखेंगे। कसाई से भी बढ़कर हैं। मानवता नाम की तो कोई चीज हीं नही रह गई इनमें।

'डाक्टर तो भगवान होते हैं, दूसरा जीवन देते हैं, पर यहां तो....।'
'पता नहीं कैसे-कैसे लोग इस पेशे में आ जाते हैं....।'

'अरे केवल पैसा कमाने के लिए ही डाक्टर बनते है....।'

'ये सब अमीरों के लड़के होंगे, इन्होंने गरीबी और मजबूरी तो देखी ही नहीं है, जरा गरीबी देखी होती तो इतने निर्दयी भी न होते....।'

'अरे....! गरीब आदमी के बस की कहां जो अपने बच्चों को डाक्टर बना सकें'

'....सच तो यह है कि लोगों ने अपना ईमान-धर्म सब खो दिया है.

...संस्कार तो परिवार से ही आते हैं – यदि इनके मां–बाप ने इन्हें कुछ सिखाया होता तो आज ये दशा नहीं होती....'

इधर लोगों में तरह–तरह की बातें होती रही। इतना सब कुछ सुनने के बाद भी डॉ॰ तिवारी के चेहने पर शिकन तक न आई थी।

जब डाक्टर तिवारी को पता लगा कि बेहद बुरी स्थिति में कुछ बच्चे बेहोश छटपआ रहे हैं तो भीड़ की परवाह किये बिना वह तेजी से आपातकालीन कक्ष की ओर बढ़ने लगे। छात्र गाली–गलौज करते जा रहे थे, उनका तेजी से जाना कुछ छात्रों को एसा लगा जैसे वे भीड़ से भागने की कोशिश कर रहे हैं।....एक छात्र ने उसका हाथ पकड़ लिया।

डाक्टर तिवारी ने पहले तो आग्रह किया पर छात्र ने हाथ न छोड़ा, डाक्टर बोले – 'पहले मुझे मरीजों को तो देखने दो, ये सब बातें बाद में भी हो जायेंगी। कमरे में मरीज छटपटा रहे हैं, बेहोशी की हालत में अस्पताल आये हैं....।'

पर छात्र थे जो एक न माने। डाक्टर तिवारी जो हमेशा विपरीत स्थितियों में भी मुस्कराते रहते थे, और इतनी गाली–गलौज सुनने के बाद भी जिनका मुस्कराना बन्द न हुआ था, अब उनका चेहरा गुस्से से तम–तमाने लगा था। उन्होंने एक बार जोर से झटका देकर हाथ छुड़ाने का यतन किया पर हाथ न छूटा तो छात्र पर जोर से उन्होंने एक थप्पड़ मार डाला। '....क्या करोंगे, मारोगे मुझे ? लो मार डालो, पर उन बच्चों का भी तो सोचो एक–एक श्वांस गिन रहे हैं। छात्र के गाल पर थप्पड़ मारते ही उनकी आंखों से आंसू छलक पड़े थे और वह आंसू बहाते बेहोश मरीजों तक पहुंचे। हालात बेकाबू देखकर एक बार तो वे घबरा गये थे, जल्दी–जल्दी बैड पर लिटाकर उन्होंने एक–एक को इन्जेक्शन लगाया। कभी इधर, कभी उधर, कभी इस आलमारी में, कभी उस आलमारी में। तमाम दवाओं को निकालते हुए आधे घण्टे के अन्दर–अन्दर उन्होंने अन्तिम श्वास गिनते बेहोश मरीजों को खतरे से बाहर कर दिया था। जबकि लोगों को यह विश्वास हो गया था कि अब इन बच्चों को नहीं बचाया जा सकेगा।

इस बीच पूरे अस्पताल में भीड़ हो गई थी, सारा नगर जैसे एक हो गया था। डाक्टर ने कमरा बन्द कर आधा घण्टा जी जान से एक कर

दिया था।

बाहर लोग तरह-तरह की बातें करने में लगे थे। बेहोश मरीजों के परिवारिक जन रो रहे थे, साथ ही जनता को कोस भी रहे थे। बड़ी मुश्किल से तो डॉ॰ तिवारी बिना ड्यूटी के भी आ गये थे, तुरन्त बच्चों को दिखाने के बजाय लोग नेतागिरी करने लगे अब न जाने क्या होगा, मरीजों की स्थिति देखकर तो सबको संदेह था कि मुश्किल से ही बच्चों को बचाया जा सकेगा। पर जब आधे घण्टे बाद डॉ॰ तिवारी बाहर लौटे तो वे बच्चों के पिता को थपथपाते हुये बोले - 'ईश्वर ने तुम्हारी सुन ली....सब ठीक हो जायेगा' लोग गदगद हो गये। छात्र....! जिन्होंने डॉ॰ तिवारी को भला बुरा कहा था डॉ॰ तिवारी के पांव में पड़ गये - 'डाक्टर साहब गलती हो गई, असलियत में इस अस्पताल में कोई किसी की नहीं सुनता....।'

डाक्टर ने चुपचाप बात सुनी और अपने घर की ओर चल दिये।

दूसरे दिन डाक्टर तिवारी के घर के आगे पूरा शहर एक हो रखा था, मैने सोचा आज फिर हो हंगामा मच गया, कुछ बात फिर जरूर हो गई। मैं लपकते हुये इक्कट्ठा हुई भीड़ के निकट पहुंचा। डाक्टर तिवारी को लोगों ने घेरा हुआ था, युवा नारे लगाते जा रहे थे।

हम ऐसा नहीं होने देंगे,
अपना डाक्टर नहीं खोने देंगे ।
चाहे जो कुर्वानी होगी,
जनता डाक्टर को देगी ।

तरह-तरह के नारे लग रहे थे, मेरी कुछ समझ में नहीं आया विरोधी नारे भी नहीं हैं, फिर इतनी भीड़ क्यों ? क्या बात हो गई ? मैंने पास खड़े व्यक्ति से पूछा....।

'अरे साब....! बात क्या होनी है, ले देकर तो एक अच्छा डाक्टर था उसको भी....।'

'....क्या हुआ उनको ?' मैंने जल्दी-जल्दी पूछा।

'....उनको तो क्या होना है, हुआ तो इस जनता को है पता चला कि

कल कुछ लोगों ने डॉ॰ साहब को गाली-गलौज ही नहीं की, उनके साथ हथापायी भी कर दी थी, इनता देवता आदमी....दुनियां में ढूंढ कर भी ऐसा डाक्टर नहीं मिलेगा....।'

'लेकिन वो बात तो कल वहीं खत्म हो गई थी, लोगों ने महसूस भी कर लिया था कि उनसे गलती हो गई....।'

'अरे साब ! ये डाक्टर हैं न....बहुत स्वाभिमानी हैं, किसी का एक न लेता न किसी को एक देता....ये तो गरीब जनता का मसीहा था। इन बड़े लोगों का क्या, अच्छा डाक्टर यहां नहीं होगा तो ये कहीं भी जा सकते हैं। लेकिन गरीब जनता का क्या होगा ? किसको परवाह है इन गरीबों की....?'

बगल में दूसरा व्यक्ति बहुत भावुक हो गया था। 'बहुत बुरा हो गया, डॉ॰ साहब का ट्रांसफर हो गया....।' मैं चौंका....! 'ट्रांसफर हो गया ! लेकिन क्यों ?' '....देखा हनीं आपने ? क्या व्यवहार किया गया उनके साथ....। जिस आदमी ने इस अस्पताल के लिये रात-दिन एक किया, हमने कभी सोते हुये इस आदमी को नहीं देखा, सुबह सात बजे भी घर पर भीड़ लगी रहती है। फिर आठ बजे अस्पताल में आते हैं, तो शाम चार-पांच बजे जाकर उनका खाना होता है, और फिर रात ग्यारह बजे तक बीमारों को देखते रहते हैं, रात दो बजे भी अस्पताल के चक्कर काटते हुये वे किसी भी आदमी को दिखाई दे सकते हैं।'

'इस आदमी ने तो शादी तक नहीं की, अपनी तनख्वाह भी गरीब बच्चों पर लगा देता है। क्या हो गया इस जमाने को। अच्छे आदमी की तो अब पूछ ही नहीं है, कुल मिलाकर एक तो डाक्टर था जो मरीजों का ध्यान रखता था, उसे भी नहीं टिकने दिया।'

लोगों की भीड़ लगातार बढ़ती जा रही थी, जो भी सुनता डॉ॰ तिवारी का स्थानान्तरण हो गया, वही अस्पताल की ओर भागता, लोग हाथ जोड़ते....।

'डाक्टर साहब हमें इतनी बड़ी सजा न दें, हमें आप जो सजा देना चाहें मन्जूर है, उन लड़कों की ओर से हम क्षमा मांग रहे हैं, हम हाथ जोड़कर प्रार्थना कर रहें हैं....आप अपना स्थानान्तरण निरस्त करा लीजिये, हम किसी कीमत पर आपको यहां से जाने नहीं देंगे।'

मैं भीड़ को चीरता हुआ अन्दर पहुंचा डॉ॰ साहब का सामान बंध चुका था, जाने की पूरी तैयारियां कर रहे थे मैंने उन्हें झिंझोड़ कर पूछा – 'डाक्टर साहब !' आपने ऐसा क्यों किया ? क्यों जा रहे हैं आप हमें छोड़कर ?

बड़े अनमने भाव से डाक्टर तिवारी बोले – 'लोगों से अभद्र व्यवहार जो करता हूं' मेरा तन–मन जल उठा – कौन कहता है ऐसा ? सारा शहर तो यहां उमडा पड़ा है आपको रोकने के लिए। बाहर खड़ी भीड़ आपकी लोकप्रियता की साक्षी है।'

'इसीलिए तो....' मुस्करा कर उन्होंने जेब से अपना स्थानान्तरण आदेश निकाल कर मेरे हाथ में रखा, मैंने पढ़ा।

'लोगों से रोज–रोज अभद्र व्यवहार करने के कारण आपको जोशीमठ स्थानान्तरित किया जाता है।'

अप्रत्याशित

जब मैं उस फैक्ट्री में नौकरी करता था जो जीतू की गिनती नम्बर एक के मिस्त्रियों में होती थी कई बार फैक्ट्री के निर्माण कार्य हेतु उसे मैंने सूचना दी थी, पैसे भी खूब कमाता था, तब वह बन ठन कर भी रहता था।

लेकिन यह इतनी जल्दी कैसे बदल गया, मेरी समझ में न आया। पर जल्दी भी कहां ? कई साल गुजर गये तब से तो। और फिर बदलने में देर भी कितनी होती है....। चन्द मिनटों के अन्दर बदल जाता है इन्सान, और फिर यह तो कई महीने क्या कई वर्ष हो गये हैं। हां बदलाव भी आता ही है, पर ऐसा भी क्या बदलाव जो आदमी की जिन्दगी ही पूरी तरह से बदल दें। अच्छा बदलाव तो अच्छा लगता है, नहीं तो कितनी पीड़ा और कष्ट होता है, जब अपने चित-परिचित की स्थिति पहले से बदत्तर दिखाई देती है। जीतू फटेहाल में मेरी दुकान पर बढ़ा, हाथ जोड़ता हुआ बोला....'आज दया कर दो मुझ पर।'

उसके कपड़े फटे थे, कई जगह गाल पर खरोंच आयी थी मैं आश्चर्यचकित हो बोल पड़ा – 'क्या बात हो गयी ?'

बोला – 'बात क्या होनी है ? पास के गांव वालों ने यह दुर्दशा की है 'फलाने' की पत्नी मरी थी उसे जलाने के लिए उस घाट पर ले गये थे लेकिन उस गांव के लोगों ने उस घाट तक हमें जाने ही नहीं दिया।

क्या जमाना है एक तो मुर्दा और उसे जलाने के लिए भी स्थान नहीं है। उल्टा मार-मार कर हमें बेहाल कर दिया। कुछ पैसे थे जब मैं वह भी निकाल छीने।'

'घर में भूखे पड़े हैं सब, राशन पानी नहीं है जो पैसे थे वो भी कम्बक्तों ने छीन लिए। अब आप ही बतायें क्या करूं मैं ? आज आपने मेरी लाज रखनी है सिर्फ 20.00 रूपये दे दीजिए मुझे, मैं जल्दी ही मजदूरी कर आपके पैसे चुकता कर दूंगा।'....बार-बार हाथ जोड़े गिड़-गिड़ाने लगा वह।

उसकी बात हालांकि मेरी ठीक समझ में नहीं आयी फिर भी उसको फटेहाल देख कर मुझे उस पर दया आ गयी, मैंने उसे 20.00 रूपये दिये, 20.00 रूपये लेते ही उसने पीछे नहीं देखा। वह तेजी से दुकान से नीचे उतर कर कब सड़क पार कर गया मुझे कुछ पता नहीं चला।

मैं उसके बारे में सोचने लगा कैसी-कैसी बातें करता था यह, कितनी ऊंची आकांक्षायें थी इसकी। लेकिन इतने वर्षों मे यह बढ़ने के बजाय अपनी स्थिति से गिरा है इसकी स्थिति सुधरने के बजाय तेजी से गिरी है, लेकिन रहा कहां होगा यह ? क्यों ऐसी दशा हो गयी ? मैं एक गहरी सोच में डूब गया।

घर आया तो मैंने घर में भी उसकी चर्चा की, घर में जितने भी लोग उसे जानते थे ये सुनकर सबको गहरा दुःख हुआ। कुछ ही दिनों बाद वह दूर सड़क पर दिखाई दिया लेकिन वह उस दिन किसी के साथ था, सीधे आगे निकल गया मैंने सोचा कि जल्दी में होगा और दूसरे ही दिन वह फिर दुकान पर चला आया। मुझे खुशी हुई कल तो मैंने उसके बारे में धारणा ही बदल दी थी कि एक तो पैसे ले गया और मुंह मोड़ कर जा रहा है, दुआ-सलाम भी कुछ नहीं, लेकिन आज तो मैं खुश हो गया यह जुबान का पक्का है। कहता था दो-चार दिन में ही पैसे दे दूंगा।

उसने जेब में हाथ डाला तो मैं तपाक से बोला -

'अरे मिस्त्री जी इतनी जल्दी क्या थी ? आ तो जाते पैसे कहीं भाग थोड़े ही रहे थे, कहीं काम कर रहे हो आजकल ?

'अरे वर्मा जी काम-काज जो मिलता तो ऐसी दशा होती, बार-बार

आना पड़ता हाथ पसारने के लिए आपके पास।' मैं चींख उठा,

'ऐसा क्यों कह रहे हो मिस्त्री ? कितनी बार आये तुम मेरे पास और ऐसी भी क्या बात है ? सुख-दु:ख में ही तो जान पहचान काम आती है ?' उसका हाथ जेब का जेब में ही रह गया, मैंने उसके परिवार के बारे में पूछा तो बोला....।

'मत पूछो वर्मा जी, परिवार की बात। बहुत दु:खी हो गया हूं मैं इस परिवार से। एक ठीक नहीं हो पाता कि दूसरा बीमार पड़ जाता है मेरी तो सारी की सारी कमाई इन्हीं की दवा-दारू पर खत्म हो गई। रोज-रोज की इस छी-छी से तो अच्छा था मर जाते यह सब एक साथ।'

'ऐसा न कहो मिस्त्री । परेशानियां तो इन्सान की जिन्दगी में आती ही हैं, अरे इस दुनियां में कोई इन्सान ऐसा नहीं होगा जो सुधी होगा, कुछ न कुछ दु:ख का पुच्छल्ला उसके पीछे जुड़ा ही है ऐसी स्थिति में धैर्य से काम लेना होता है।

'धैर्य भी कब तक रखे' - कहते हुए उसने जेब में एक पर्ची निकाली और मेरे सामने रख दी। मेडिकल स्टोर की बिना नाम की इस पर्ची पर 35.00 रूपये की दवाईयां लिखी हुई थी। मैं चक्कर में पड़ गया कि मुझे पर्ची क्यों पकड़ा रहा है ? फिर सोचा अपना समझ कर ही तो सारी बातें बतला रहा है, नहीं तो यह पर्ची दिखाने की क्या आवश्यकता थी इसे ? पर्ची थमाते ही उसने मेरे पांव पकड़ लिए 'आप मेरे माई बाप हैं, बीबी बिस्तर पर पड़ी है डाक्टर ने यह दवाईयां लिखी थी 35.00 रूपये की पड़ रही है। 10.00 रूपये के सिवाय एक पैसा भी नहीं है कहां से ले जाऊं दवाईयां वहां ? सब इन दवाईयों की इन्तजार कर रहे होंगे। आपने हमेशा ही इस दरिद्र की सहायता की है। बस एक बार और फिर आपके पास आया हूं आप सोचना कि आपने मेरे कफन के ऊपर यह 25.00 रूपये डाल दिये। जिन्दा रहा तो जरूर आपका कर्जा चुकाऊंगा, आपका हमेशा ऋणी रहूंगा। इस जन्म में नहीं तो दूसरे जन्म में सही, आपके ऋण से उऋण होने की कोशिश करूंगा, आपका दास बन कर रहूंगा....।

और आधा घण्टे तक वह बोलता ही चला गया, मुझे कुछ बोलने का मौका दिये बिना जब तक उसने 25.00 रूपये नहीं ले लिये तब

तक न जाने कितनी बार पांव में पड़ता गया, और न जाने कितनी बार हाथ जोड़े। ऐसा लग रहा था कि उसकी आंखों से आंसू अब बहें या तब बहें।

जैसे ही मैंने 25.00 रूपये निकाले उसने तुरन्त मेरे हाथ से पैसे पकड़े और एक पल के लिए भी नहीं रूका, मुझे बहुत बुरा लगा लेकिन फिर अपने मन को बुझाया....।

हो सकता है कि उसकी पत्नी सच में इतनी बीमार हो। ऐसी स्थिति में एक-एक मिनट भी तो उसके लिए बहुत मूल्यवान है, जब वह तेजी से दौड़ता नजर आया तो मुझे लगा कि वह बहुत जरूरत मन्द था मुझे सन्तोष हुआ चलो पैसे आये चाहे न आये उसकी पत्नी की जान बच जाय बस।

मैंने सांय दुकान बन्द की और थैला पकड़े घर की ओर चल दिया, मैं उस समय चौंक उठा जब बीच शहर की सड़क के किनारे वह नाली में पड़ा मिला, मेरी घबराहट की कोई सीमा न रही इतनी जल्दी में आ रहा था, यह किसी बस, ट्रक या टैक्सी ने इसे कुचल दिया है मैंने तेजी से थैला एक तरफ रखा और जैसे ही मैं उसे उठाने को हुआ कि अगल-बगल खड़े दुकान वाले बोले 'अरे वर्मा जी कहां लगे हो आप, इन शराबियों के तो हाल ही यह हैं। किस-किस को सम्भालते जाओगे ?

मैं फिर चौंका शराबी....। नहीं ! नहीं ! यह तो जीतू मिस्त्री है इसकी पत्नी बहुत ही बीमार है, दवाई लेकर जा रहा था....।

दुकानदार हंस पड़े, दवाई लेकर जा रहा था ? अरे साहब ये अपनी पत्नी के लिये नहीं अपने लिये दवाई ले जा रहा होगा।'

'नहीं नहीं मैंने अभी इसे दवाई के लिये पैसे दिये हैं।' सभी लोग ठठाकर हंस, दिये, मतलब यह कि आज आप भी बेवकूफ बन गये।'

'बेवकूफ....?'

मुझे लगा मानो दुकानदारों ने मिल कर मेरे कान में गर्म लावा उड़ेल दिया हो और जीतू मिस्त्री ने मेरे खून पसीने के 25.00 रूपये बरसाती गधेरे में डाल दिए हों।

□ □

दिहाड़ी पर

मैं जैसे ही जीप से उतरा उन्होंने मुझे घरे लिया। '....साब ! कुछ न्याय तो हमको दिला देते, कितने साल हो गये हमको, पर कोई पूछने वाला नहीं।' दूसरा हाथ जोड़ता हुआ बोला।

'सुबह छः बजे से उठकर सड़क पर आ जाते हैं, सुबह से शाम तक इस सड़क पर काम करते हैं, मजदूरी भी तो क्या मिलती है। इस मंहगाई के जामने में ये तो ऊंट के मुंह में जीरा है। हमतो जिंदगी को यूं ही घसीटते चले आ रहे हैं। हमारी जिंदगी भी क्या जिंदगी है।' दूसरा बहुत भावुक हो गया था।

'....अरे साब ! उस चन्दू के बारे में तो आप जानते होंगे न ! पिछले साल की ही तो बात है, उन दिनों कैसा हंसता-खेलता था। वह कितना मजाकिया था, पर भगवान को भी उसका हंसना-खिलखिलाना अच्छा नहीं लगा।' मेरा हाथ पकड़ कर वह थोड़ी दूर आगे तक ले गया।

'....साब ! वो आगे वाला गेट देखे रहे है न आप, बस ठीक वही पर पड़ा बज्र। हम लोग सारा काम करके वहां पर इकट्ठा होते थे। कभी न कभी, पर उस दिन न जाने चन्दू के दिमाग में क्या बात आई, वह सबसे पहले आकर वहां पर खड़ हो गया था। सबको आवाज देकर ऐसे ही मजाक-मजाक में बोला, आओ ! तुम्हारे लिये चाय तैयार। इससे आगे वह कुछ बोलता कि ऊपर से यकायक पत्थर आये और चन्दू वहीं पर बुरी तरह घायल हो गया। हमने तुरन्त उठाया, रातों-रात उसी बेहोशी की हालत में उसे पौड़ी लाये, पर अस्पताल में भी रात को कोई डाक्टर

नही । जितने भी डाक्टर थे हमने सबके दरवाजे खट खटाये पर सबका एक ही उत्तर था 'हमारी ड्यूटी नहीं....।' किसकी ड्यूटी है ? कोई बताने तक को तैयार नहीं। भोपाल काका को तो इतना गुस्सा आ गया था कि वे अन्त में डाक्टरों को गाली-गलौज देने पर उतारू हो गये थे। मैंने बड़ी मुश्किल से शांत किया उन्हें, तब भोपाल काका ठहरा। उसको इतना भी पता नहीं कि हम गांव के लोग हैं, फिर ऐसी हालत में पौड़ी आये हैं। किसी का क्या पकड़ना, यदि पुलिस में रिपोर्ट कर वो तो लेनी की देनी पड़ती, सब जेल में बन्द होते कोई पूछने वाला तक नहीं मिलता। भला गरीबों की किसको चिन्ता, फिर नियम कानून भी तो हम गरीब लोगों के लिए ही होते हैं। बड़े लोग जो करते हैं। वहीं कायदे-कानून बन जाते हैं।

अचानक उसे संकोच सा हुआ, उसे लगा जैसे वह गलत बोलता जा रहा है। मेरी ओर देखकर बोला - साब ! आपको बुरा तो नहीं लग रहा है ? साब बुरा न मानियेगा मेरी बातों का हम अनपढ़ गंवार हैं न। समझ भी तो कहां है पर आप जब यहां आ ही गये तो अपना रोना आपके पास हो तो रोना है हमने....।

फिर वह चुप हो गया था, लेकिन मेरी चन्दू के बारे में जिज्ञासा पूरी न हुई। मैंने पूछा....कहां है चन्दू आजकल ? अरे साब ! वह तो परलोक सिवार गया। वही तो बात हम आपसे कर रहे थे, कि हम गरीबों का कोई नहीं होता दुनियां में उस दिन देर रात तक तो डाक्टर न मिले थे पर स्वर्ग जायें भोपाल काका उन्होंने जब हो हल्ला मचाया तो तब जाकर बहुत देर बाद एक डाक्टर आया, चन्दू का बहुत खून निकल चुका था। हमने कितनी प्रार्थना की डाक्टर से हाथ-जोड़कर कि और काम तो हो ही जायेगा, पहले वो चन्दू को देख लें, पर डाक्टर था कि पहले रजिस्टर भरने में जुट गया। गुस्सा तो इतना आ रहा था कि इस डाक्टर को जान से मार दें। पर हम तो मजबूर बेवस खड़े थे। डाक्टर के इस तमाशे को मौन खड़े देख रहे थे। भोपाल काका को भी हमने कसम दे दी थी, कि वह कुछ न बोले। अब बन-बनाया काम बिगड़ जायेगा।

डाक्टर ने चन्दू को देखा तो एक ग्लूकोस की शीशी तो चढ़ा दी और बोले अभी जितना जल्दी हो सके खून को व्यवस्था करो। हमको

पता ही नहीं था कि खून कहां से मिलता है। जब डाक्टर ने कहा कि हम भी दे सकते हैं तो हम पांचों ने अपना खून देने की बात कही, चन्दू की किस्मत देखो एक का खून न मिला, और जान पहचान का कोई न था। फिर डाक्टर ने तमाम दवाईयां और इन्जेक्शन बाजार से लाने के लिए लिख दिये थे। पैसा एक न था, दो–चार रूपये पड़े थे जेब में, वो भी खत्म हो गये थे।

मैं और देवड़ भाई दोनों लोगों के लाने व दवाई के लिये पैसों की व्यवस्था के लिये गांव भागे। दस–बीस लोगों को इकट्ठा करके दूसरे दिन दोपहर तक हम अस्पताल पहुंचे। पर जाने का कोई फायदा नहीं हुआ, हमारे पहुंचने से पहले ही चन्दू स्वर्ग सिधार गये थे।

'तिने बच्चें हैं उनके ?' मैंने सहानुभूति पूर्वक पूछा। एक युवक का हाथ पकड़ कर आगे आये, यही तो है एक मात्र उनका लड़का, तब छः में पढ़ रहा था, चन्दू का के मरने के बाद पूरे परिवार का बोझ इस पर आ गया। पढ़ता कैसे, परिवार तो भूखों करने की दशा में आ गया था, बेचारे दिन्नू को ही स्कूल छोड़नी पड़ी। आजकल हमारे ही साथ तो मजदूरी कर रहा है इस सड़क पर ! मैं तो कितना समझाता हूं इसे, अरे हमने तो अपनी जिन्दगी खराब की ही की। तुम क्यों यहां जिन्दगी खराब करना चाहते हो ? 17–18 साल हो गये हमको दिहाड़ी पर किन्तु अभी तक पक्के होने का नाम नहीं, जो भी बड़ा साब आता है उसको हम हमेशा अर्जी देते हैं....पर....।

दूसरे ने उसे टोका....। 'तू तो बस शुरू करता है तो चुप होने का नाम नहीं लेता। साब आपको इतना समय कहां जो हमारी ही बातों को सुनें। इतने सारे लोग आपसे बात करने आये, सबको ही तो सुननी है आपने....। 'बुरा न मानियेगा साब ! अधिकार समझकर बोला आपसे।' तीसरा बोला – 'समय बहुत हो गया, क्या रात तक काम करने की सोची है।' तभी लोगों ने अपना गैंती, फावड़ा, सब्बल इत्यादि पकड़ा और आगे चल दिए।

□ □

ऐसा क्या कारण

'डाक्टर ने शुक्रवार के दिन पहले ही बता दिया था कि शनिवार को अम्मा का आपरेशन होगा, खून की जरूरत पड़ेगी। अम्मा का 'ब्लड टैस्ट' भी करवा दिया था, 'ए' पौजिटिव निकला था, इसका कहना था कि 'ए' पौजिटिव तो सामान्य है, कहीं न कहीं तो मिल ही जायेगा चिन्ता की कोई बात नहीं।

मैं आश्वस्त था, शनिवार को ग्यारह बजे आपरेशन होना था सोचा कि आठ बजे प्रात: से ग्यारह बजे तक सब युवाओं का खून टैस्ट करवा लूंगा। निश्चित मिल ही जायेगा। सूची भी तो पच्चीस युवाओं की बनाई थी।

आठ बजे से खून टैस्ट का जो क्रम शुरू हुआ, साढ़े दस बज गये, चौबीस युवाओं में से किसी का भी खून मिल नहीं सका। बीस तक तो मैं आशावान ही रहा उसके बाद में निराश होने लगा। फिर तो इधर-उध र भागदौड़ और तेज शुरू हो गई। ग्यारह बजे आपरेशन है और अभी तक खून का प्रबन्ध नहीं हो सका, वैसे ही अम्मा कमजोर....!' बिना खून के आपरेशन तो हो ही नहीं सकता।

जगह-जगह टेलीफोन किये पर सफलता नहीं मिल पाई। जो भी मिले, नहीं ये ग्रुप हमारा नहीं है। मेरी चिन्ता अब सीमाओं को भी लांघने लगी, जितने भी लोग मेरे सामने आते सबको किसी न किसी के पास

भेजता, उनसे पूछ कर आये क्या ?

पुलिस लाइन में फोन किया, सब तरह से निराशाजनक उत्तर मिलता रह। अस्पताल के परिचारक से मेरी दशा देखी न गई, वह तुरन्त बोला. ...।

साब जिस दिन बस दुर्घटना हुई थी, उसी दिन यहां अस्पताल में एक डाक्टर आया था, अपना खून देने कोई नया प्राइवेट अस्पताल खुला है यहां....।

मैंने कहा – 'ब्लड' ग्रुप किले तब न....।

वह बोला 'वही खून तो उसका है, जिसे आप ढूंढ रहे हैं।' सुनकर मुझे राहत मिली। फोन नम्बर पता करवाया गया, टेलीफोन किया तो डाक्टर साहब बोले मैं तो आपको ही ढूंढ रहा था, कुछ बातें करनी थी।

मैंने कहा 'संयोग की बात है, आज मैं पहले आपसे सहयोग की अपेक्षा कर रहा हूं।'

'बोले....कहिये तो'

मैंने पूरी बात बताई तो तुरन्त बोले, आप चिन्ता न करें। मेरे पूरे परिवार का 'ब्लड' ए-पौजिटिव है मेरी पत्नी और मैं परामर्श कर लेते हैं। दोनों में से कोई भी अस्पताल आ जायेगा।

और थोड़ी ही देर बाद दोनों पति-पत्नी कन्धे में थैला लटकाये अस्पताल भी पहुंच गये थे। इनके अस्पताल पहुंचने से पूर्व ही दो अन्य युवकों का 'ब्लड' ग्रुप मिल गया था। दो ही नहीं, फिर तो एक के बाद एक अनेकों लोगों का खून मिलने लगा।

अनूप थपलियाल का 'ब्लड ग्रुप' मिला, फिर उसे भोजन हेुत भेजा गया।

डाक्टर दीपक अपनी पत्नी सहित पहुंचे। मुझे मालूम नहीं था कि डाक्टर दीपक की पत्नी विदेशी है, पहले तो मुझे ऐसा लग रहा था कि डाक्टर दीपक से मेरी मुलाकात होनी चाहिए। एक ही नगर में तो हैं हम, कहीं न कहीं मुलाकात हुई होगी। पर सामने पड़ने पर लगा कि नहीं मुलाकात नहीं हुई।

कक्ष में बैठे बातों का क्रम शुरू हुआ। डाक्टर दीपक अत्यन्त सौम्य, मृदुभाशी और विचारवान लगे। 'बोले निशंक जी ! आपसे मिलना चाहता

था।' लेकिन आपसे पहले हम ही मिल गये।' मैंने कहा फिर बोले -

'ऐ मेरी पत्नी है रेनु, हम दोनों विगत एक वर्ष से यहीं पर काम कर रहे हैं। हमने तो पहले भी यहां अस्पताल में कहा था कि जब भी 'ए' पौजिटिव खून की किसी को जरूरत पड़ेगी, हमें सूचित कर दीजियेगा हमारे पूरे परिवार का 'ए' ग्रुप है। मेरी पत्नी भी खून देने के लिये आई है।

मैंने धन्यवाद देते हुए कहा आज तो गजब हो गया, आपकी स्वीकृति मिलते ही पांच, छः लोग एक के बाद एक इसी ग्रुप के मिलते गये, अब काम हो जायेगा। आपको कष्ट दिया।

'हसमें कष्ट की क्या बात है, हमारा तो जीवन ही इसीलिए है। बात आगे बढ़ी तो संघ पर आकर रूक गई बोले।

'मैं हपेल गढ़वाल जल संस्थान के अन्तर्गत कार्य करता था, मेरी शादी रेनु जी से हुई तो कुछ लोगों को मुझसे परहेज होने लगी। वे मुझे ईसाई मिशनिरियों के साथ जोड़ने लगे।'

पत्नी भी हां में हां मिलाती रही थी, हिन्दी ठीक बोलनी नहीं आती थी, पर टूटी-फूटी हिन्दी में अपनी सारी बात कहने में वह समर्थ थी। बोली....मैं रेनु ! हम हिन्दू रीति से शादी की।

'जब मैंने कहा कि आप अच्छी हिन्दी बोल लेती हैं - बोली।

'हम हिन्दी बोलाना सीख रहा है, सात साल हो गया हिन्दुस्तान में, बहुत अच्छा लगता गढ़वाल। हम यहां से जाने का मन नहीं करता.... । हम यहां के लोगों के वास्ते कुछ काम करना चाहते हैं, कितना सुन्दर जगह है ये।'

मुझे नहीं मालूम था कि वे भी डाक्टर हैं, मैंने पूछा....क्या हालैण्ड में आप सर्विस करती थी ?'

'नहीं ! मैं भी डाक्टर हूं....।'

'इन सात-आठ सालों में हालैण्ड गये ही नहीं....?' बोली न! हर साल हम जाते हैं, पहली बार जब हम गये तो घर के लोग हमको बोले इतनी दूर नहीं जाओं। वे डरते थे कि वहां न जाने कैसा-कैसा होगा। जब हम यहां के बारे में बताया तो वो लोग खुश हैं अब हमको बोलते हैं तुम्हारा घर गढ़वाल ही हो गया है। जहां हम रहते हैं हमारा घर है,

गढ़वाल से प्यार हो गया, यहां के लोग कितना अच्छा है, हम काम करना चाहता है उनके लिये, पर कुछ लोग अभी भी 'शंका' करते हम ईसाई बनाना चाहते हैं।

थोड़ा हंसती हुई बोली 'हमतो खुद हिन्दू हो गये हैं....हम तो हिन्दुस्तानी हो गये हैं, हिन्दुस्तान अच्छा है हम काम यहीं करेगा।'

इतने में मेरे बगल में बैठा डाक्टर दीपक का ही नामराशि दीपू बोला – 'डाक्टर साहब यह सब कैसे हो गया....?' डाक्टर दीपक हंसते हुये बोले – 'पढ़ते थे साथ में कुछ-कुछ विचार मिले तो....वह बीच में ही बोल पड़ी।

'तब हम डाक्टर दीपक को बोले तुम हालैण्ड चलो, लेकिन ये साफ-साफ मना कर दिये, बोले। 'मैं यहां काम करना चाहता हूं।

डाक्टर दीपक बीच में ही बोल पड़े 'असल में हिमालय में मैंने कुछ काम करने का फैसला शुरू से ही लिया है, परिवार के तमाम विरोधों के बाद भी मैं सामाजिक संस्थाओं के साथ मिलकर काम कर रहा हूं। मैं तो सिर्फ सेवा करना चाहता हूं। मेरे मन में कौन क्या है ऐसा कुछ नहीं। गढ़वाल में काम करने की बहुत रूचि है इसीलिये यह क्षेत्र चुना। वैसे तो नाना देशमुख के पास भी गया था, उन्होंने कहा भी था कि मैं किसी एक क्षेत्र को ले लूं और उसी पर कार्य करने पर वे बहुत व्यस्त हो गये, वह योजना ऐसी ही लटक गई। शिवानन्द आश्रम में आया, फिर इधर आ गया।'

बातें चल ही रही थी कि डाक्टर आ गये। 'अम्मा को आपरेशन थियेटर में ले जाओ, मैंने उनसे अनुमति मांगी और चल दिया।

मैं आपरेशन थियेटर के बाहर बैठा सोचता रहा कि 'ऐसा क्या कारण है जो दुनियां के लोग हिन्दुस्तान से प्रभावित होकर यहां छोड़कर जाना नहीं चाहते किन्तु हिन्दुस्तान के लोग लिख-पढ़कर भी पैसों के मोह में विदेश जाने की होड़ में लगे हैं।'

□ □

ड्राइवर

वह मुझे बुलाकर ले गया –साब ! 'आपको लेने आया हूं। मैंने कहा....बस पांव मिनट और रूक जाइये....फिर चलते हैं। लेकिन मुझे तो पांच मिनट की जगह एक पौन घण्टा लग गया था। इस बीच वह युवक दो–तीन बार मुझे अपनी उपस्थिति और दे चुका था, मानो वह कह रहा हो, कि आपने तो केवल पांच मिनट कहा था और यहां तो पचास मिनट होने जा रहे हैं। उस गोरे चिट्टे युवक की आंखों में स्पष्ट इस प्रश्न को पढ़ा जा सकता था। साथ ही उसके चेहरे पर कुछ असंतुष्टता का भाव भी परिलक्षित हो रहा था।

'काम निपट जाने के तुरन्त बाद मैं उसके साथ चल दिया। मैंने सोचा निदेशक ने किसी अधिकारी को मुझे बुलवाने हेतु भेजा है। पर जीप के निकट पहुंचते ही उसने जिप्सी का दरवाजा खोला और मुझे बिठाकर दरबाजा बन्द कर फिर ड्राइवर की सीट में बैठ गया....फिर तेजी से जीप चलाते हुए बड़–बड़ाने लगा।

'क्या करना है ऐसी नौकरी का भी, एक दिन की बात हो तो कोई झेल ले, रोज–रोज का धन्धा हो गया ये....।

मुझे कुछ बुरा सा लगा, ऐसा लगा जेसे ये मुझसे कुछ छिपाना चाहता हो। मैंने बीच में ही टोकते हुए उससे पूछा – 'क्यों भई क्या बात हो गई ? कुछ नाराज नजर आते हो....बोलो।'

'साब हम छोटे लोगों का नाराज और खुश होना क्या। नाराज होंगे भी तो क्या कर लेगी हमारी नाराजगी सिवाय हमको जलाने के।'

जैसे ही वह चुप हुआ, मैंने उसे फिर छेड़ दिया था 'क्यों क्या बात हो गई ?'

'साब नाराज न होना एक बात कहना चाहता हूं....बड़े लोग छोटे लोगों को पता नहीं क्या समझते हैं, जैसे छोटे लोगों पर जान ही नहीं होती....? आज सुबह पांच बजे का उठा हुआ हूं साब मैं, और तब से अब तक एक चाय का कप तक नसीब नहीं हुआ....।'

मैंने घड़ी देखी, रात के आठ बज रहे थे, मुझे आश्चर्य हुआ, आश्चर्यभाव से ही मैंने फिर पूछा उसे....तो क्या तुमने सुबह से खाना भी नहीं खाया ? वह थोड़ा सा मुस्कराकर बोला – 'साब आप खाने की बात कर रहे हैं मैं कह रहा हूं कि एक चाय तक तो नसीब हो जाती। साब ने सुबह छः बजे बुला दिया था, इस डर के मारे कि कहीं आंख लगी की लगी न रह जाय। तीन बजे आंख खुली तो फिर सोया ही नहीं।

'क्या तबसे इतना भी समय नहीं मिल सका कि तुम कहीं पर चाय पी पाते ?'

क्यों नहीं साब घण्टों तक एक ही जगह पर रहे पर गाड़ी से उतरते ही डायरेक्टर साब बोलते थे, बस चलना है, रावत ! तुरन्त पांच मिनट में चलना है, और मैं प्रतीक्षा करता रहता हूं पर कहीं-कहीं तो घण्टों लग जाते हैं। कई बार साहस भी किया तो गाड़ी को बन्द कर चाय-पानी पी आऊं, पर कहीं चला भी गया तो साब बोलते कि ड्यूटी भी रावत ठीक से नहीं करता और फिर तब पिताजी की आज्ञा का भी उल्लंघन नहीं कर सकता....वे कहते थे'....बेटा जिन्दगी में खुश रहना है तो जब अपने अधिकारी को खुश रखोगे तभी तुम्हें स्वयं खुशी मिल सकती है।'

'मैंने हमेशा से यही कोशिश की है कि साब नाराज न हों, इतने साब बदले गये, कभी किसी को शिकायत का मौका नहीं दिया पर साब कभी-कभी मन दुःखी हो जाता है आपको सच नहीं आयेगी। मैंने अपने बच्चों को आज तक खेलते नहीं देखा है, सुबह छः बजे उठता हूं, कई-कई दिनों बिना बताये घर से दूर रहना पड़ता है, कभी भी बच्चों के साथ मिल बैठकर खाना नहीं खाया' 'कितने बच्चे हैं तुम्हारे ? मैंने यों ही पूछ लिया ।

'जी तीन ! बड़े नटखट हैं'

'तीन बच्चे ?'

'हां शादी तब हो गई थी जब दसवीं कक्षा में था, अधिक खेती

बाड़ी होने क कारण, फिर एक मात्र संतान होने के कारण भी पिताजी ने शादी जल्दी कर दी। बड़ी लड़की तीसरी में पड़ती है, लड़का पहली में, और एक लड़का बहुत छोटा है।' फिर तनिक उदास हो बोला – 'पर साहब क्या करें, बच्चों की देख–रेख एवं शिक्षा–दीक्षा का समय नहीं मिलता। हम लोगों के बच्चे भी हमारी तरह ही ड्राइवर, चपरासी, चौकीदार से अधिक और कुछ नहीं बन पाते।' वह रुआंसा सा हो गया था।'

'देखो रावत बच्चों को अच्छे स्कूल में रखो, उनको पढ़ने का पूरा समय मिलना चाहिए। उनमें ऐसी प्रेरणा पैदा करो कि वे किसी दबाव में न पढ़े अपितु उन्हें अपने भविष्य की स्वयं चिन्ता हो कि उन्हें क्या करना है, क्या बनना है।'

गाड़ी को तभी एक झटका लगा। सामने दफ्तर आ गया था, रावत ने गाड़ी बन्द की तेजी से बाहर उतरा दरवाजा खोला मैं भी अपना ब्रिफकेस उतार का बाहर निकला समय देखा, नौ बजने को थे। मैंने खाना नहीं खाया था, मेरी इच्छा थी कि आज इसे भी मैं अपने साथ बिठाकर खिलाऊं, बेचारा सुबह से भूखा है।

'रावत !' मैंने कहा – तुम मेरे साथ चलो, आज खाना साथ ही... .' इससे पहले कि मैं अपनी बात पूरी कर पाता सामने से एक व्यक्ति आया, शायद चपरासी था, 'रावत ! बड़े साहब का फोन आया है कि गाड़ी तुरन्त घर में लाओ, अभी श्रीनगर जाना है' रसवत ने मेरी तरफ देखा फिर खिल–खिला कर हंस पड़ा, सलूट ठोका और एक झटके से गाड़ी स्टार्ड कर आगे बढ़ा दी।

मैं किंकर्तव्यविमूढ़ सा खड़ा सामने धूल उडाती दौड़ाती हुई गाड़ी में बैठे, बड़े दिल वाले एक छोटे आदमी के बारे में सोच रहा था, कितना खुश, प्रसन्नचित और कर्तव्य परायण।

□ □

अपना दर्द

रात के एक बजे का समय, बाहर तेजी से आंधी–तूफान चल रहा था, दरवाजे पर जोर–जोर की आवाज के साथ खट–खटाहट हुई। डॉ॰ पीयुष जैसे ही उठने को हुआ, पत्नी ने हाथ पकड़ लिया। 'दरवाजा नहीं खोलना है दिन–भर तो क्लीनिक में रहते हो। न रात का समय, न दिन का समय इस समय कहीं नहीं जाओगे।'

'पीयुष फिर पलंग पर बैठ गया। थोड़ी देर तक कुछ आवाज न आने पर सरिता बोली – कुछ तो चैन मिला....सिर की बला टली।

लेकिन कुछ देर बाद ही फिर जोर-जोर से आवाज होने लगी और तेजी से कोई दरवाजा पीटने लगा। अब तो नौबत यहां तक आ पहुंची थी कि मानों कोई दरवाजा तोड़ने पर उतारू हो।

पीयुष जोर से उठा, और जैसे ही दरवाजे की ओर लपका, सरिता ने फिर हाथ पकड़ लिया। 'कोई रोयेगा–धोयेगा और तुम फिर चले जाओगे इस रात को।'

लेकिन पीयुष ने सरिता से हाथ छुड़ाते हुये जैसे ही दरवाजा खोला, खून से लथपथ एक युवा पीयुष के पावों में गिर पड़ा।

'डॉ॰ साहब मेरी मां को बचा लीजिये। डॉ॰ मेरे ऊपर उपकार कर लीजिये। मैं आपके पांव पड़ता हूं आपके उपकार को कभी नहीं भूलूंगा, कभी भी नहीं। वह कहता चला गया था। डाक्टर को उसकी स्थिति पर दया आ गई थी 'देखो ! मैं कपड़े पहनकर आता हूं तुम ठहरो !' उसके सिर की चोट से खून रिसते जा रहा था। डाक्टर तुरन्त पट्टी और दवा लाया, उसके सिर पर लगाने गला। युवा ने डाक्टर के हाथ पकड़ लिये थे ' डाक्टर साब ! मेरी चिन्ता न करो, मेरी मां तड़प रही होगी, –

डाक्टर साहब अभी तक वह जिन्दी होगी भी या नहीं, कुछ पता नहीं। वह अन्तिम सांसे गिन रहीं थी, कल दोपहर बारह बजे का चला हूं जगह-जगह भारी वर्षा व पहाड़ गिरने के कारण सड़क टूट-फूट गई हैं। वैसे भी पूरे डेढ़ दिन का रास्ता है हमारे यहां से। हम गांव के लोग साब बस ऐसे ही पशुओं की तरह मरते हैं, कोई दवाई तक नहीं ले पाते हैं।

वह एक खास क्षेत्र में रह रहे लोगों का वर्णन कर रहा था, उनकी क्या-क्या समस्यायें हैं, कैसे विषम परिस्थितियों में जीवन ढो रहे हैं, लोग।

फिर बोला - 'डाक्टर साहब बस एक बार मेरी मां को बचा लीजिये' डाक्टर तुरन्त तैयार होने लगा, किन्तु पत्नी ने पुनः रोक लिया 'इस रात में और इतनी दूर ! नहीं सुबह जाओगे ! मैं रात बिल्कुल भी नहीं जाने दूंगी। वह लड़का तो चला ही गया है। '

'लेकिन वह तो मेरे साथ ही जायेगा, मैंने कह दिया था उसे।'

सरिता बोली - 'मैंने कह दिया था कि वे सुबह आयेंगे समय नहीं।' डाक्टर गुस्से से तमतमा गया, लेकिन थोड़ी देर गुस्से के पश्चात् पुनः पीयुष ने कपड़े उतारे और लेट गया, वह लेटा ही था कि तेजी से उसके मानस पटल पर अतीत का दृश्य छाने लगा। जब गांव में पिताजी बीमार थे और छोटा सा बच्चा था पीयुष, मां भी बीमार थी, और कोई देख-रेख करने वाला नहीं। कैसे रोता चला गया था पीयुष डाक्टर गोस्वामी के घर, कि उसके पिता बीमार हैं, मां चापरपाई से उठ तक नहीं पाती, चार साल से बीमार है। पिताजी ही तो उसकी सेवा करते थे, खाना बनाने से लेकर हर काम करते थे।

गोस्वामी ने दो टूक जवाब दिया था, मैं किसी के घर नहीं जाता। कितना रोया था पीयुष पर एक न माने थे डाक्टर गोस्वामी। अन्ततोगत्वा पीयुष रोता हुआ निराश घर पहुंचा था, जब तक वह घर पहुंचा, देखता है कि सारा घर भीड़ से भरा है और मां बेहोश पिताजी की ओर देखता है तो उसके प्राण पखेरू उड़ चुके थे। डॉ॰ गोस्वामी यदि ऐसा नहीं करते तो आज ये सब नहीं होता।

उसके मनो-मस्तिष्क में जब यह घटना कौंधी तो वह तेजी से उठा और कपड़े पहनने लगा, 'सरिता ! तुमने कष्टों को नहीं देखा है, मैंने

डाक्टरी पास सिर्फ इसलिये की थी कि मैं ऐसी स्थिति न आने दूंगा कि एक बेबस अपने मां-बाप के जीवन के लिये भी दर-दर डाक्टरों के पास भटके, और उसके बाद भी न बचा सके।

तैयार होकर बाहर आया एकाएक कड़-कड़ाहट हुई, बिजली चमकी, बिजली की चौंध में उसने देखा कि वह युवा बेहोश पड़ा है, उसे लगा मानो वह युवक कोई और नहीं वह स्वयं है, और डाक्टर गोस्वामी के घर के आगे बेहोश पड़ा है, वह बुरी तरह घबरा गया।

तुरन्त उसे उठाकर घर के अन्दर ले गया। इन्जेक्शन लगाकर उसे वहीं छोड़कर इस तूफानी रात में वह अपना दवाईयों का बैग हाथ में थामे उसके घर की और दौड़ पड़ा वर्षा और भी तेज हो गई थी।

□ □